एक ऐसे दुखद निश्चय की घड़ी में बहुत विचारणीय है कि पिछले पाँच छः हजार वर्षो में मनुष्य ने जिन रास्तों से आनंद उत्सव को उपलब्ध किया था, वे रास्ते, वे मार्ग, वे पद्धतियाँ क्या आज भी हमारे काम में आ सकती है। कुछ ऐसा हुआ है विगत 300-400 वर्षो में कुछ ऐसे विचारक, कुछ ऐसे दर्शन जहर की तरह सारी दुनिया के मन पर छा गए है, उन्होंने मनुष्य के मन को, मनुष्य के हृदय को नासूर में बदल दिया है। एक दुःखभरे फोड़े में बदल दिया है। आज एक भी आदमी ऐसा नहीं है जो आनंद से भरा हो, जिसके आनंद के गीत और काव्य हो जिसमें दिव्यता के दर्शन हो सके।

जैसे-जैसे मनुष्य की दिव्यता विलीन होती जा रही है, नित्शे ने कुछ दिन पहले जर्मनी में कहा था कि ईश्वर विलीन हो गया है। बहुत भद्दी बात कही थी लेकिन धीरे-धीरे स्वीकृत हो गई और लोगों के मनों तक पश्चिम में फैली और पूरब तक उसकी हवा फैल गई। उसके कुछ दिनों बाद मार्क्स ने कहा धर्म अफीम का नशा है। जब तक दुनिया में धर्म है तब तक आदमी का समाज सुखी नहीं हो सकता। ये बड़ी अजीब और बेहूदी बातें थी जैसे धर्म लोगों को दुख दे रहा हो, बुराई की तरफ ले जा रहा हो, धर्म जैसे लेगों को अनैतिकता की ओर ले जा रहा हो, ऐसा प्रतीत होता है। और फिर यह बात पश्चिम के अन्य लोगों ने भी कही जैसे फ्रायड जो मनोविज्ञान के मसीहा है, उनका नाम तो लोगों के मनो में बैठ गया है। उन्होंने कहा ये धर्म का भ्रम आगे ज्यादा चल नहीं सकता है। उन्होंने एक किताब लिखी थी 'थ्न्ज्न्त्म्थ् ।छ प्स्स्न्ैप्व्छ- एक भ्रम का भविष्य' और उसमें लिखा धर्म अब मरेगा, अब यह ज्यादा दिन नहीं चल सकता। इसने मनुष्य को बहुत सता लिया अब इसे आगे नहीं बढ़ने दे सकते।

मैं थोड़ा सा विचार करता हूँ, क्या बात है? क्या ये सारे लोग पागल है? धर्म को अफीम, जहर कहते हैं, पागलपन और भ्रम कहते हैं। यह लोग बिल्कुल पागल नहीं है। तो क्या पिछले 5000 वर्षो में हम पागल रहे क्या? निश्चित हम भी पागल नही थे। बात कुछ यू है कि धर्म बहुत नीचे दब गया और धर्म के ऊपर अधर्म खड़ा हो गया। उसी अधर्म को ये सारे लोग गाली दे रहे हैं। धर्म की चिंगारी यू दब गई है राख में कि अब राख ही राख दिखाई देती है, वो ठीक समझदार, विचारशील, वैज्ञानिक लोग हैं उन्हें दिखाई पड़ता है कि यह सारा का सारा धर्म लोगों को नुकसान पहुँचा रहा हैं। ये लोग पूरे ढ़ेर को हटा देना चाहते है। उससे खतरा हैं क्योंकि राख के साथ धर्म की चिंगारी भी हट जाऐगी और मनुष्य के जीवन का सबसे बड़ा नुकसान हो जाऐगा। एक तरफ वे ठीक हैं क्योंक राख को हटाना चाहते हैं, एक तरफ वे गलत हैं कि राख के साथ चिंगारी भी हटा देगें और दूसरी तरफ हमारे मुल्क के लोग है जो कहते है धर्म अमृत है, धर्म ही मार्ग है। धर्म के बिना मनुष्य जी नहीं सकता वह पशु हो जाएगा। क्या यह लोग भी बिल्कुल ठीक है? यह लोग भी बिल्कुल ठीक नही है। जितने वे गलत हैं उससे कम गलत ये भी नही है। ये वो सारी राख को भी धर्म बना के बचा रखना चाहते है।

इन दोनों से खतरा पैदा हुआ है। पुराणपंथियो से खतरा पैदा हुआ है, प्रगतिवादियों से भी खतरा पैदा हुआ है। अंध धार्मिक श्रद्धालुओं से, अंधधार्मिक अश्रद्धालुओं से दोनो से खतरा पैदा हुआ है। धर्म इस समय दो खतरों के बीच में है। इन दो के बीच धर्म की मौत हो जाएगी। अगर हम इस दो से धर्म को बचा सकते है, तो भविष्य में हम धर्म के लिये जगह बाकी रखते हैं और मनुष्य ने जो अनुभव, जो उपलब्धि, विगत हजारों वर्षों की साधना से जो पैदा की है, वो नष्ट होने से बच सकती है। इन दो के बीच से रास्ता खोज लेने की बात है। ये मुझे इतना स्पष्ट दिखाई देता है जितना की यहाँ बैठे आप लोग दिखाई दे रहे है। शायद आप से भी स्पष्ट यह

बात दिखाई देती है। ऐसी घड़ी में, ऐसी स्थिति में जबकि जो धर्म को मानते है वो भी उसे नष्ट करने के पागलपन पर खड़े है और जो नहीं मानते वो भी इसी पागलपन मैं लगे है, ऐसे में बहुत ही संभलकर चलने की बात है। इन धार्मिक लोगों के पागलपन से घबराकर विचारशील लोगों ने कहा हम धर्म को अस्वीकार करते है, लेकिन यह कोई ऐसी चीज़ नहीं जिसे अस्वीकार लिया जा सके। धर्म हमारे स्वभाव का नियम है, उसे अस्वीकार कर के हम जी नही सकते।

एक छोटी से कहानी कहता हूँ। पश्चिम के एक बहुत बड़े कवि हैं हेनरी मनरो उन्होंने एक कविता लिखी है अंगूरबेल। उन्होंने एक काल्पिनिक बात कही है। उसे समझे, ईश्वर के भवन पर, उसकी कुटिया पर एक अंगूर की बेल छाई हुई है। यह ईश्वर के भवन पर बहुत दिनों से अंगूर देती रही है। खूबसूरती बढ़ाती रही और फैलती गई है। आखिर कई दिनों से वह काम करती रही है, और थक गई है। उसके पास भी विद्रोह की खबर पहुँच रहीं है कि लोग ईश्वर से विद्रोह कर रहे हैं। एक दिन उस बेल ने तय किया कि मैं भी ईश्वर से विद्रोह कर दूँ। मैं भी थक गई, परेशान हो गई चढ़ते-चढ़ते, फैलते-फैलते अब मैं भी विद्रोह करना चाहती हूँ। उसने सुबह सूरज के उगते से ही चिल्लकार कहा कि अब मैं नहीं बढूगीं। उसने जोर से चिल्लाकर ये बात कही कि आकाश सुन ले, सारे देवी देवता सुन ले। ईश्वर ने क्या किया? ईश्वर ने उसकी खबर सुनी कि बेल ने कह दिया है कि अब मैं बढ़ूँगी नहीं। अब मैं बढ़ने को अस्वीकार करती हूँ, मना करती हूँ। ईश्वर ने खिड़की के बाहर मुँह निकाला और कहा अब तुम्हें कोई जरूरत नही, मत बढ़ो तुम्हारा मन नहीं चाहता, मत बढ़ो। बेल बहुत खुश हुई। उसने सोचा विद्रोह सफल हो गया, उस दिन से वह ना बढ़ने की कोशिश में लग गई, कोशिश करती रही लेकिन बढ़ना जारी रहा, रूका नहीं। वो बहुत घबराई उसने कोशिश की ना बढ़ने की। उसके फणसे फूटते गये उसमें नये पत्ते आते गये, पूरी कोशिश के बाद भी वह बढ़ती गई। हेनरी मुनरो ने लिखा वह प्रयास करती नहीं बढ़ने की और ईश्वर इस बात को जानता था। मनुष्य ने जो धर्म को अस्वीकार किया है, वह बेल के अस्वीकार जैसा है।

धर्म मनुष्य के विकास का नियम है। उसे अस्वीकार नहीं कर सकते। बेल लाख कोशिश करे तो भी बढ़ने से रोक नहीं सकती, बढ़ने से रोकेगी तो मर जाएगी। धर्म हमारे आंतरिक जीवन के विकास का नियम है, विज्ञान है इसलिये हम उसे अस्वीकार नहीं कर सकते। हम चाहे कितना ही अस्वीकार करें फिर भी वह हमारे भीतर बढ़ता रहेगा। उन सारे लोगों ने जिन्होंने ईश्वर को अस्वीकार किया और उन सारे विचारकों ने जिन्होंने धर्म को इंकार और अस्वीकार किया है, वे भी अपने भीतर धर्म के प्रति लालायित रहे हैं। क्यों अगर आप उनसे पूछेगें वे कहेगें झूठ है यह बात। हम धर्म के प्रति बिल्कुल भी लालायित नही हैं, लेकिन मैं पूरे विश्वास के साथ कहता हूँ कि सारे अस्वीकार के बाद भी जैसे बेल बढ़ती रही हैं वैसे नास्तिक भी सारे अस्वीकार के बाद धर्म के प्रति उत्सुक रहा है। इसलिये कि धर्म सत्य और आनंद को उपलब्ध करने का एक विज्ञान है। कोई भी मनुष्य आनंद को अस्वीकार नहीं कर सकता, आनंद पाने के लिये हर मनुष्य प्यासा रहता है।

एक व्यक्ति से मैंने पूछा किसलिये इतनी दौड़-धूप, किसलिये इतना श्रम। उसने कहा धन कमाना चाहता हूँ। मैंने कहा किसलिये। उसने कहा आनंद के लिय। एक दूसरे आदमी से पूछा किसलिये इतना अध्ययन किसलिय इतना पठन। उसने कहॉ मैं ज्ञान अर्जित करना चाहता हूँ। उसे मैंने पूछा किसलिये, उसने कहा आनंद के लिये। एक साधु से मैंने पूछा कि किसलिये तपश्चर्या, किसलिये त्याग किसलिये सब कुछ छोड़ना। उसने कहा आनंद के लिये। सभी छोटे-बड़े प्राणी, मनुष्य, पूरा समाज, एक ही ज्योति को पाने के लिये दौड़ रहे हैं। वह ज्योति आनंद की है। ईश्वर को अस्वीकार भी कर दें लेकिन आनंद को अस्वीकार नहीं करते। और मैं अगर आपसे पूछू ईश्वर को किसलिए पाना चाहते हैं, आप भीतर से उठता हुआ उत्तर पाएंगे कि आनंद के लिये। आनंद के केंद्र पर ही सारा जीवन दौड़ रहा है और घूम रहा है। नास्तिक और धर्म विरोधी भी इसी आनंद की खोज में है। मनुष्य स्वभाव से

ही अपूर्ण है। अधूरा है बिना पूरा हुए उसे तृप्ति नहीं है। जब तक वह पूरा ना हो जाए तब तक वह बढ़ेगा और चलेगा।

जब सिगमंड फ्रायड ने यह लिखा कि अब धर्म के भ्रम के ज्यादा दिन नहीं रहे, धर्म टूट जाएगा। जिस दिन मैंने यह पढ़ा, मुझे हंसी आई। उसका अर्थ यह हुआ कि मनुष्य अब अधूरा होने से तृप्त हो जाएगा। धर्म कोई ऊपर से छुपी हुई बात नहीं है। धर्म कोई ऊपर से आदमी का पैदा हुआ ख्याल नहीं है, पंडितों की सोची विचारी बात नहीं है। वह किन्हीं किताब लिखने वालों की करतूत नहीं है, वह किन्हीं विद्यालयों में बैठे हुए लोगों का विचार और चिंतन नहीं है। धर्म मनुष्य के भीतर बैठी बुनियादी प्यास का उत्तर और जवाब है, और जब तक वह प्यास है, जब तक वह भीतर अधूरापन है, लाख कोशिश करें धर्म को नष्ट नहीं किया जा सकता। इसलिए धर्म सनातन है, शाश्वत, इसलिए इसे नष्ट करना असंभव है।

यह धर्म जो नष्ट नहीं हो सकता और जो मनुष्य को पूरा करता है क्या है? क्या इस धर्म को हम समझकर अपने को पूर्ण कर सकते हैं? हमसे पूर्व सारी सदियों में हजारों लोगों ने अपने को पूर्ण किया है। वह हमारे जैसे लोग थे बुद्ध, महावीर, ईसा, कृष्ण। उनके शरीर, मन में हमसे भिन्न कुछ भी न था। अचानक इसी शरीर और मन के भीतर एक सूरज प्रकट हो गया। उन सारे लोगों की स्मृति हमें यह बताती है जो सूरज उनके भीतर छुपा था, वह हमारे भीतर भी छिपा हुआ है। और जिस भांति उन्होंने अपने भीतर की ग्रंथियां खोल दी और प्रकाश को पा लिया, हम भी पा सकते हैं। जो चीज एक मनुष्य ने पाई है वह प्रत्येक दूसरा मनुष्य पा सकता है, क्योंकि प्रत्येक मनुष्य की बनावट के नियम एक हैं। प्रत्येक मनुष्य के विकास का नियम एक है। प्रत्येक मनुष्य की आंतरिक सत्ता का नियम एक है। कृष्ण, बुद्ध, महावीर, मेरा और आपका एक ही निर्माण है, एक ही नियम है, एक ही जीवन है। अगर वह अपने को निखार सके, अगर वह अपने को साफ कर सकें और चमका सके और दर्पण बन गये, उनमें आनंद और शांति उतरी तो कोई कारण नहीं है कि हममें ना उतर सकें। कोई कारण नहीं कि हम वहां खड़े हो सके जहां बुद्ध और महावीर खड़े हो सके है।

एक छोटी-सी अद्भुत कहानी आपसे कहूँ। यूनान में एक यूनानी बादशाह के यहां कुछ यूनानी चित्रकार काम करते थे, चित्र बनाते थे। चीन से कुछ यात्री, जो चित्रकार थे वे घूमते हुए यूनान आए और राजा से कहा हम भी चित्र बनाना चाहते हैं। यूनानी राजा ने कहा कि मैं पसंद करूंगा कि तुम दोनों एक ही तरह के चित्र बनाओ। फिर मैं देखू यूनानी कला या चीनी कला कौन सी श्रेष्ठ है। उनको एक बड़ा भवन दिया गया। यूनानी चित्रकारों ने बहुत-सा सामान मांगा और जब राजा ने चीनी कलाकारों से कहा आपको क्या चाहिए तो उन्होंने कहा हमें कुछ नहीं चाहिए। चीनी कलाकारों की यह बात सुनकर बादशाह बहुत हैरान हुआ और पूछा कि बिना सामान के चित्र कैसे बनाओगे। उन्होंने कहा हमारी कला ही कुछ ऐसी है कि हमें सामान की जरूरत नहीं है। अजीब बात थी सारे यूनान में खबर फैल गई की कुछ ऐसे ही चित्रकार आए हैं जो बिना रंग और तूलिका के चित्र बनाएंगे। चित्र बनाना शुरू हुआ चीनी चित्रकारों ने अपनी दीवार पर जहां चित्र बनाना था उसके सामने लंबा पर्दा डाल दिया और साल भर तक उस पर्दे को उठाया नही। वह उसके भीतर क्या करते थे लोगों को पता नहीं चला। ना कभी सामान ले गए भीतर, ना बाहर कभी सामान लाए। उनके ही सामने यूनानी चित्रकारों ने बड़ी मेहनत की और सुंदर चित्रों की एक सजावट दीवार पर प्रस्तुत की।

एक वर्ष पूरा हुआ। यूनानी बादशाह देखने आया उसने यूनानीयों का चित्र देखा मुग्ध हो गया अद्भुत कलाकृति थी। उसने चीनियों से पूछा भाईयों आपका क्या हुआ। उन्होंने अपना पर्दा खोल दिया यूनानी बादशाह, उसके साथी और दरबारी देखकर हैरान रह गए चीनियों की दीवार पर यूनानियों के चित्र से भी अद्भुत लेकिन वही चित्र मौजूद था। राजा ने पूछा तुमने क्या किया? चीनी बोले कुछ नहीं हमने दीवार को

साल भर साफ कर चमकाया और खूब चमकाया और दर्पण बनाया और युनानियों की मेहनत उसमें प्रतिबिंब हो रही है। वह चमकती हुई दीवार पर वही चित्र 50 गुना ज्यादा सुंदर और खूबसूरत हो कर खिल उठा। जब इस कहानी को मैंने पढ़ा तो मुझे याद आया कि यह चीनियों की कला तो आत्मा को पाने जैसी कला मालूम होती है।

आत्मा को पाने के लिए किसी सामान की जरूरत नहीं है। आत्मा को पाने के लिये कुछ बनाना नहीं होता। ना ही कुछ गढ़ना होता है, सिर्फ मन-वचन को साफ कर देना होता है, दर्पण बन जाये ताकि उसमें आत्मा का प्रतिबिम्ब बन जाये। जिससे जो सब में व्याप्त है वह दिखने लग जाये, उसकी झलक मिलने लगे। उसकी झलक पाने के लिये अपने को दर्पण बना लेना हे। ये दर्पण हम अपने को कैसे बना सकते हैं, अकेला यहीं प्रश्न सबसे महत्वपूर्ण है। बाकी सब व्यर्थ है।

पंडितो से जरा बचना, किताबें लिखने वालो से थोड़ा बचना, भाषण देने वालों से थोड़ा बचना, वह सब व्यर्थ की बातें है। उसमें कोई जीवन को पाने की कला और विज्ञान नहीं हैं। बात छोटी-सी और एक ही है। एक ही कुल बात सारे धर्मो ने कही कि मनुष्य अपने आप को दर्पण कैसे बना सकता हैं, ताकि प्रभु उसमें प्रतिबिंबित हो सके। वो चाहे जैन हो, बौद्ध हो, हिंदु हो, ईसाई हो, इस्लामिक हो बात उन्होंने एक ही कही है। कैसे मनुष्य स्वयं को दर्पण बनाले। अब रास्ता निश्चित सरल है, सुगम है। कुछ लोग हैं जो कहते हे, कठिन हैं परमात्मा को पाना। यह झूठी बात हे, वे पाप करते है। ऐसी बात कहना भी पाप है। क्यों? यह बात बुरी लगेगी। क्योंकि जो बात बार-बार कठिन कही जाती है, वह सचमुच कठिन हो जाती है। अगर किसी रास्ते से आप निकल रहे हैं और रोज़-रोज़ कोई कहे बहुत बीमार मालूम होते हैं, और दूसरे मोड़ पर कोई दूसरा आदमी भी कहे बहुत बीमार मालूम होते हैं और सच में आपके हाथ पैर थकने लगेगें और कमजोर होने लगेगें।

इस पर मुझे एक कहानी याद आती है। एक बूढ़ा सीधा सरल ब्राह्मण आदमी एक बकरी के बच्चे को खरीद कर घर गया। जब वह रास्तें पर था तो गाँव के 4 आवारा लोगों ने सोचा कि बकरी का बच्चा तो बढ़िया हैं अच्छा भोजन बन सकता है। मगर इसे पायें कैसे? छीनने में झगड़ा होगा उनमें से एक होशियार था, उसने कहा छीनने की कोई जरूरत नहीं। वो ब्राह्मण खुद ही छोड़ कर भाग जाए, ऐसी भी कोई तरकीब हो सकती है। उन्होनं कहा मैं चौरस्ते पर जाकर कहूँगा, पंडितजी ये कुत्ते को कहाँ से खरीद लाये। बात तो फिजूल लगेगी। लेकिन चार में सें एक ने जाकर कहा नमस्कार पंडित जी आप तो कुत्ते को कभी छूते भी नहीं और यह कहाँ से खरीद लाये। पंडित जी बोले क्यों मजाक करते हो भाई मैं बकरी का बच्चा खरीद कर लाया, आप कुत्ता कहते हैं। पंडित हँसता हुआ आगे बढ़ा लेकिन आगे गली के मोड़े पर गया कि दूसरा आदमी मिला गजब पंडित जी कुत्ता मुझे भी एक चाहिये था, आप कहाँ से लाए? पंडित को शक हुआ कि बात क्या है? उसने अपनी बकरी को टटोलकर देखा, ये तो बकरी ही है अजीब पागल लोग है, बकरी को कुत्ता कहते हैं। वो थोड़ा आगे गया कि सुनसान रास्ते पर तीसरा आदमी मिला उसने कहा महाराज हद हो गई कोई देख लेगा आप कुत्ता को सिर पर लिये है। अब तीन आदमी एक ही बात बोल रहे थे उसे भी विश्वास होने लगा कि यह कुत्ते का ही बच्चा है। कोई कारण अब नहीं था अविश्वास का उसने बकरी के बच्चे के नीचे उतार कर देखा, उसे बकरी का ही बच्चा लगा लेकिन 3 आदमी एक ही बात बोल रहे थे और उतने में चौथे आदमी ने आकर कहा महाराज कुत्ते को क्यों पकड़ रहे है? उसका ख्याल चला गया कि बकरी है। उसने उस बकरी के बच्चे को वही छोड़ दिया यह सोचकर नाहक उपद्रव खड़ा हो जाये, इज्जत चली जाये, जात से निकाल दिया जाये। ब्राह्मण उसे छोड़कर वहाँ से भाग गया। अब इस आदमी को क्या हुआ? इस आदमी को एक बात चार दफे कही गई। और बात भी झूठी और फिजूल। लेकिन उसके मन में बैठ गई। मन का यह नियम है। अगर एक बात बार-बार दोहराई जाये तो पकड़ लेती है।

बहुत बार यह बात दोहराई गई कि धर्म की साधना कठिन है, बहुत दुरूह और दुर्गम यह मार्ग है। इस बात में कोई तथ्य और अर्थ नहीं है और इसे कहने वालो ने इसलिये यह कहकर पाप किया कि लोगों के मन में यह बैठ गया कि कोई बुद्ध, महावीर, कृष्ण कर सकते हैं। हम तो साधारण लोग, हमारे बस की बात नहीं है। यह सोचकर हमने सारे प्रयास छोड़े दिये हमने ये सोच के मंदिर में बैठकर पूजा कर ले फूल चढ़ा दे इतना ही हमारे बस का है। जिन्होंने धर्म को कठिन कहा उसी का यह परिणाम है। इस परिणाम के विरोध में लोग खड़े हुए। अभी रवीन्द्रनाथ की कविता पढ़ी गई वह इसका ही विरोध हैं, लेकिन विरोध कभी जोश भरा रहता है तो वह दूसरी गलती कर देता है। एक तरफ मंदिर गलत हो गया। लोगों ने विरोध में कहा मंदिर फिजूल वहाँ चलो जहाँ मजदूर गिट्टी फोड़ रहा है। अब मैं आपसे पूछता हूँ यह दूसरी गलती है। जहाँ मजदूर गिट्टी फोड़ रहा है। वहाँ भगवान कैसे मिल जायेगा, ये भी कितनी फिजूल की बात है। जहाँ कोई खेत में किसान काम कर रहा है, वहाँ कैसे भगवान मिल जायेगा कोई जहाँ बीमार है, वहाँ कैसे भगवान मिल जायेगा जो भगवान पहले यहाँ नहीं हैं वो कोड़ी में नही पाया जा सकता। यह बात फिजूल है सब प्रतिक्रिया है। एक तरफ जब मंदिर झूठा हो जाता है, तो मंदिर का विरोधी कहीं और बात करने लगता है। लेकिन भगवान न मंदिर में है ना कोड़ी में है। भगवान प्रत्येक के भीतर है, और पहले वहाँ जानना होता है। और वहाँ जानने से सबमें जान लिया जाता है। फिर मंदिर, मजदूर, किसान, बीमार सब में मिल जाता है। हम यदि अपने भीतर पा लेंगे तो सबमें दिखाई देने लग जाता है। मैं हूँ द्वार, मैं हूँ रास्ता मैं हूँ कुछ जिसकी सीढ़िया उतरने से कुछ पा ले सकता हूँ। और वे सीढ़िया पार की जाती है। सामान से नहीं मन को दर्पण की तरफ साफ करने से वो दर्पण कैसे साफ हो मन पर धूल किसकी बैठी है?

चीन में एक साधू हुआ। चीन मैं एक नियम है, जब साधू अपना स्थान छोड़ता है तो दूसरे साधू को वह उस जगह नियुक्त करता है। वह साधु बहुत बड़े आश्रम का प्रधान था। उसने कहा- अब मैं अपना आसन अपना स्थान छोड़ता हूँ, किसी ओर साधु को नियुक्त करना चाहता हूँ। जो भी साधू मेरी बात का उत्तर दे सकेगा उसे मैं नियुक्त कर दूँगा। उसने एक दर्पण रखा, उस पर धूल डाल दी। दर्पण में दिखाई देना बंद हो गया। उसने दर्पण के बगल की दीवार पर लिखा- मनुष्य का मन और बताये इस पर धूल कौन सी पड़ी है। सारे आश्रम के साधु उसके स्थान पर पहुँचना चाहते थे। अब तो बड़े हैरान हुए। दर्पण पर धूल पड़ी थी वह तो समझे बगल में लिखा मनुष्य का मन, उस पर कौनसी धूल पड़ी है। उत्तर दे? किसी ने लिखा बुराईयाँ, किसी ने लिखा पाप, किसी ने कुछ लिखा किसी ने लिखा बुरे संस्कार, बुरी वृत्तियाँ, चोरी, लोभ, लेकिन प्रधान इन उत्तरों से संतुष्ट नहीं हुआ अभी मूल बात नहीं कही गई। किसकी धूल मन को पकड़े हुए है? एक साधु भर रह गया था जिसने उत्तर नहीं दिया था। उसे पूछा गया, उसने कहा मुझे तो एक ही बात दिखाई देती है और वह है विचार। विचार की धूल मन को पकड़े हुए है। चोरी, लोभ, आदि वृत्तियाँ ये विचार के अलग-अलग हिस्से है, अंग है। लेकिन मूलतः विचार का पर्दा ही मन को पकड़े हुए है। मन बिल्कुल बेहोश है, विचारों से घिरा हुआ। हर समय उठते बैठते काम करते सोने तक विचारों की धारा बह रही है। एक विचार के पीछे दूसरे विचार का प्रवाह चल रहा है। जैस नदी बहती है, बहती चली जाती है। रूकती नहीं घाट बदल जाते है। लेकिन नदी बहती चली जाती है, वैसे ही समय बदलता जाता है लेकिन नदी बहती चली जाती है, वैसे ही समय बदलता जाता है लेकिन हमारे विचार का प्रवाह मन पर बहता चला जाता है। यही विचार की धूल हमें अपनी आत्मचेतना तक नहीं पहुँचने देती। इसको अगर हम झड़ा दे और गिरा दे, तो हम अपनी चेतना में प्रविष्ट हो जाते है। संत तारण ने इस धूल को झड़ाने को शून्य योग कहा है। जैसे यह धूल गिरेगी मन विचार से शून्य हो जायेगा। वही शून्य स्वभाव में उतर जाना स्वरूप में उतर जाना है। शून्य में उतरने का अर्थ है विचारों के पार हो जाना। कैसे हम विचारों के पार हो यह तो कठिन बात मालूम होती है। एक छोटे से विचार को ही छोड़ना कठिन मालूम होता है। जब कोई विचार

छोड़ने को कहा जाये तो और दुगनी ताकत से भीतर आने लगता है। जैसे मैं आपसे कहूँ राम शब्द आपके मन में ना आये, आप पायेगें राम दुगनी ताकत से बड़े-बड़े अक्षरों में आपके मन में आ रहा है। आप हटाने की कोशिश करेगें वह और जोर से पकड़ेगा। विचार बड़े विरोधी है। वे आपकी नहीं मानेगें। तिब्बत में एक साधू हुआ है। उस साधू के पीछे एक युवक बहुत दिन तक लगा रहा। साधू ने कई बार कहा मेरे साधू कोई सिद्धि, कोई चमत्कार नहीं, मेरा पीछा छोड़ो। युवक बोला मैं आपसे कोई न कोई सिद्धि या मंत्र चाहता हूँ। साधू ने कहा अच्छा आज तो मंत्र ले जाओं। अमावस की रात्रि थी, साधु ने कहा एक छोटा सा मंत्र देता हूँ। पाँच मिनट में तुम सिद्ध हो जाओगे और जो भी करना चाहोगे हो सकेगा, लेकिन एक बात का स्मरण रखना जब तुम मंत्र को पढ़ो तो बंदर का स्मरण ना आये। बस कोई ओर शर्त नहीं, तपश्चर्या नहीं करनी, साधना नही करनी कोई व्रत, उपवास नहीं करना बस 5 मिनट इसे पढ़ना है। लेकिन ध्यान रहे बंदर का ख्याल ना आये। युवक नाचता हुआ मंत्र लेकर घर को लौटा 5 मिनट कुल करना है। कोई और साधना न कोई तपश्चर्या करनी है। और रही बात बंदर तो बंदर तो कभी याद ही नहीं आया। लेकिन जैसे ही वह सीढ़ियों से उतरा बंदर उसकी आँखों में दिखने लगा, वह बहुत घबराया। रास्ते पर चलने लगा तो कई बंदरों की कतारे उसके मन पर चलने लगी। उसने बंदरों के विचार को झिड़का, हटाया, लेकिन बंदर थे कि आते ही चले गये।

आप भी होते तो आपके साथ भी यही होता। यह मन का नियम है। जब वह अपने घर पहुँचा तो बंदरों के अलावा कोई दूसरा ख्याल नहीं था। आँख बंद करे तो बंदर, आँख खोले तो बंदर बैठे उठे तो बंदर उसके पीछे थे बहुत घबराया। उसने कहा साधू कुछ नासमझ मालूम होता है। अगर उस नासमझ को ये पता था पहले से बंदर के कारण यदि मंत्र सिद्ध नहीं होता तो काहे को उसने नाम लिया। जिदंगी में जिसका स्मरण नहीं आया वह अब पीछा ही नहीं छोड़ रहा। रात को स्नान करके सोचा फिर बैठे, ऐसे बैठे, वैसे मंदिर में बैठे, नदी के घाट पर बैठे, सब उसने कोशिश की लेकिन बंदर के विचार ने पागल कर दिया था। सुबह वह थका मांदा वापस साधू के पास लौटा और कहा रख लो अपना मंत्र, अब ये सिद्ध नहीं हो सकता क्योकि बंदर पीछा नहीं छोड रहे है। अगर कोई अपने विचारों से लड़ेगा उसका यही होगा जो इस बंदर वाली कहानी में हुआ है। कोई किसी विचार को निकाल नही सकता ठीक ही लोग कहते है। कि कठिन है। जब एक छोटा सा विचार नहीं निकलता तो पूरे मन की धूल कैसे निकलेगी। अब यदि हम किसी धूल भरे कमरे में जायेगें तो वहाँ धूल उड़ेगी ही, अब यदि उस धूल को हम पंखा लेकर या सामान लेकर बैठाने लगे तो नीचे की और जमी धूल उड़ने लगेगी। और यह धूल फिर और पूरे कमरे में फैल जायेगी। अब कमरे में धूल को बैठाने का विज्ञान क्या है? आहिस्ता से घुसे, अगर घुसने में थोड़ी बहुत धूल उड़े तो घबराए नहीं, चुपचाप खड़े हो जायें। धूल अपने आप बैठ जाऐगी मन का नियम यह है कि उसे छोड़े, छाड़े नहीं, चुपचाप प्रवेश करें। थोड़े बहुत विचार उठेगें, धूल भरे कमरे में थोड़ी बहुत धूल उड़ेगी लेकिन जब धूल उड़ेतो उससे घबराकर बैठाने की कोशिश की तो सब उल्टा हो जाता है। विचार स्वयं ही शांत हो जाते हैं। थोड़ा शांत होकर मन को ठहरने दे। दमन की नहीं विरोध की नहीं विचारों के विसर्जन की जरूरत है। कैसे यह होगा? कैसे हम मन के भीतर जाये, कि विचार धीरे-धीरे से अपने से गिर जाये पर्दा खुल जाये, दर्पण साफ हो जायें और शून्य में प्रवेश हो जाये।

एक छोटी सी कहानी से आपको यह बात समझ आयेगी। बुद्ध के पास एक श्रोण नाम का राजकुमार आया। फिर वह साधु हो गया। पहले ही दिन भिक्षा माँगने की बात उठी। बुद्ध ने कहा देखो श्रोण तुम अभी नये नये भिक्षु हो। ना मालूम भीख माँगने जाओगे कही मिले ना मिले, इसलिये मेरी एक श्राविका है, उसको मैंने कह दिया है कि श्रोण आयेगा, जब तक यह भिक्षा माँगने की तरकीबे, रास्ते और विधी नही सीख जाता तब तक तुम इसे भोजन दे देना। वह श्राविका तुम्हे भोजन देगी। तुम उसके घर जाकर ले लेना। भिक्षा मत माँगना। श्रोण दो

मील का रास्ता पार कर विहार से उस श्राविका के घर तक गया। जब वह उसके घर जा रहा था उसे बहुत सी स्मृतियों ने घेरा, अपने घर की, अपने वैभव की अपनी पत्नी, अपनी माँ की, उसे स्मृति आई। अपने भोजन के समय की मिष्ठान जो उसे प्रिये थे वह भी याद आये, यह स्वाभाविक था। सोचा उसने आज तो अनाजने घर में, अपरिचित ना मालूम क्या मिलेगा रूखा सूखा। जब वह श्राविका भीतर ले गई थाली परोसी, भिक्षा हैरान हुआ, जो उसे प्रिय था उस थाली में सब था। उसे लगा यह संयोग की उस थाली मैं सब था। उसे लगा यह संयोग की बात है, मौके की बात उसके घर शायद यही भोजन बना होगा जो मुझे प्रिय है। भोजन करते समय उसे ख्याल आया आज भोजन करने के बाद एक क्षण भी विश्राम नहीं कर सकता। भोजन किया फिर उठकर दो मील की यात्रा करनी है अपने घर था तो विश्राम करता था। श्राविका ने कहा महाराज, भंते अगर दो क्षण विश्राम कर ले तो कोई हर्ज नहीं हैं वो उसके उसके पिछे ही खडी थी भिक्षु ने सोचा क्या बात है!! संयोग की बात होगी शायद अतिथि को विश्राम का कहा। वह विश्राम करने लेटा ही था कि ख्याल आया ये जो बिस्तर है पराया है, अब मेरा कोई बिस्तर नहीं है, मेरा कोई साया नहीं हैं। अब तो सब पराया हैं। वह श्राविका पीछे खड़ी थी उसने कहा भंते ऐसा ना सोचे यह बिस्तर तो किसी का भी नहीं है न मेरा हैं ना आपका है, बिस्तर तो बस बिस्तर है। तब तो वह घबराकर उठ गया क्या बात है जो मैं मन में सोचता हूँ क्या तुम्हें उसका पता चल जाता है। श्राविका बोली कुछ ऐसा ही भगवान के पास रहने से मन पर्याय ज्ञान उपलब्ध हुआ है। दूसरे के मन को थोड़ा सा देख पाती हूँ। भिक्षु बोला तब मैं फिर रूक नहीं सकता। मुझे जाने दें। श्राविका बोली विश्राम नहीं करेगें। उसने कहाँ अब विश्राम नही कर सकता। अब मैं जाना चाहता हूँ। भिक्षु को पसीना आ गया, वह बहुत घबरा गया। श्राविका ने कहा-आप इतने घबराते क्यो है? वह बुद्ध के पास पहुँचा और कहा मैं अब उस द्वार पर भिक्षा माँगने नहीं जा सकता क्योंकि मेरे मन में बहुत बुरे विचार भी है। श्राविका को देखकर कामवासना ने मेरे मन में धीमैं से अपने फन को उठाया था। वो भी कल देख लिया जाये और मैं धक्के देकर निकाला जाऊँ जहाँ आज स्वागत हुआ कल वहाँ अनादृत हो जाऊँ, ये अच्छा नहीं इसलिये अब उस द्वार पर नहीं जा सकता। गौतम बुद्ध ने कहा श्रोण तुम्हे तो उसी द्वार पर जाना होगा।

गौतम बुद्ध ने कहा श्रोण तुम्हें तो उसी द्वार पर जाना होगा, यही तुम्हारी परीक्षा है, यही तुम्हारी साधना है। वहाँ होश से जाना, अपने मन के भीतर देखते हुए जाना, इसमें क्या उठता है क्या गिरता है, कौनसा विचार कौनसी स्मृति, कौनसी वासना पकड़ती है, इसको देखते हुए आहिस्ता से इसके प्रति होश से भरकर जाना तुम्हे वही पड़ेगा। बुद्ध की थी श्रोण को वही जाना पडा दूसरे दिन वह होश से भरकर उस रास्ते पर चलता गया। वह अपने मन पर उठने वाले विचार और अन्य वृत्तियों सभी को देखता गया। कौन-कौन से साँप मन पर फन मारते है वह देखता गया सीढ़ीयों पर चढ़ा तो होश से चढ़ा। श्राविका के भीतर मकान में होश से भरकर प्रवेश किया, होश से भोजन किया, बाहर निकला दौड़ता हुआ, नाचता हुआ भगवान बुद्ध के पास गया और बोला-प्रभु एक अद्‌भुत बात दिखाई दी आज जब मैं बहुत होश से गया तो मैंने पाया विचार नहीं है, मैं विचारों से अलग हूँ जो विचारो को भी देख सकता है, होश से भर सकता है। मैं कुछ पृथक हूँ, मैं कुछ मन से बाहर हूँ कुछ भिन्न सत्ता हूँ। आज तो मुझे कुछ अद्‌भुत दर्शन हुआ। बुद्ध ने कहा रोज रोज वैसे ही जाओ और तुम पाआगें विचार विलीन हो गये, विचारों की मृत्यु हो जानी है जागृति उत्पन्न होती है। विचारों को दबाना, छुपाना नही पड़ता जागते ही विचार छूट जाते है जैसे कमरे में प्रकाश आ जाए, अंधेरा बाहर हो जाता है। वैसे ही जागृति, होश और विवेक मन के भीतर प्रविष्ट हो जाये तो विचार बाहर हो जाते है। वे अंधेरे की तरह है। वे नकारात्मक है। उनकी कोई सत्ता नही है। बस जागरूक चेतना उत्पन्न करने की जरूरत है। यह चेतना ध्यान से उत्पन्न होती है। ध्यान का अर्थ एकाग्रता नहीं है। ध्यान का अर्थ विचार मुक्ति है। कई लोग इसे एकाग्रता

समझकर विक्षिप्त होने की भूल करते है। ध्यान का यह ज्ञान अलौकिक और दिव्य है। यह ज्ञान मनुष्य को अपने स्वरूप में प्र्‌तिष्ठित कर देता है। एक शून्य पैदा होता है। मनुष्य स्वयं को देख पाता है। इस अपने को देख पाने को ही सम्यक दर्शन सम्यक ज्ञान कहा गया। इस अपने को देख पाने के बाद जो आचरण होता है, उसे सम्यक आचार कहा है। एक ही घटना घटती है सम्यक दर्शन की और सम्यक ज्ञान और सम्यक आचार अपने से ही आ जाते हैं। एक ही घटना घटती है सम्यक दर्शन की और सम्यक ज्ञान और सम्यक आचार अपने से ही आ जाते हैं। एक ही घटना घटती है सम्यक दर्शन की, और सम्यक ज्ञान और सम्यक आचार अपने से आ जाते हैं। उस एक घटना को हम घटा लें।

कुछ लोग हैं जो शायद सोचते होंगे कि सम्यक दर्शन आ गया तो फिर सम्यक ज्ञान भी लाना पड़ेगा। फिर सम्यक आचार भी लाना पड़ेगा। ऐसा नहीं है। ऐसा बिल्कुल नहीं है। सम्यक दर्शन आया, उसके आते ही अनायास सम्यक ज्ञान, सम्यक आचार भी उपलब्ध हो जाते हैं।

एक कहानी मैं आपको कहता हूँ। एक बहुत बड़ा जौहरी मरा। उसका लड़का और उसकी पत्नी थी। पत्नी ने अपने बेटे से कहा कि अपने काका के पास जाओ वो भी बड़े जौहरी थे और कहो हमारे पास कुछ हीरे जवाहरात है, उसे बेच दे। इन्हे हम रखकर अब क्या करेगें। लड़का अपने काका के पास हीरे जवाहरात लेकर गया। उसने काका से कहा माँ ने कहा है इन्हे बेच दे, उसके काका ने देखे हीरे जवाहरात और कहा की गठरी बंद कर लो अभी बाजार में भाव बहुत कम है। गठरी अभी घर ले जाओ। बाद में बाजार सुधरने पर इसे बेच देगें लेकिन एक बात का ख्याल रखो रोज एक घंटे को मेरे पास आया करो। मैं तुम्हे कुछ हीरेजवाहरात की परख सिखा दूँगा। लडका गठरी संभालकर घर वापस ले गया और माँ ने उसे फिर तिजोरी में बंद कर दी बेटा रोज अपने काका के पास परख सीख्ने जाने लगा। एक वर्ष पूरा हुआ। काका सुबह-सुबह इनके घर आया ओर कहा अपनी गठरी निकाल लाओं बाजार मैं भाव बहुत अच्छे है। माँ ने गठरी लाकर दी लड़के ने गठरी खोली, एक क्षण देखा उसे कुछ दर्शन हुआ। उसने गठरी उठाई और बाहर कचरे के ढेर में खोल कर फेंक दी।

माँ ने कहा पागल यह क्या कर रहा है?

लड़के ने कहा सब हीरे जवाहरात नकली हैं। असली नहीं हैं।

जैसे ही नकली का ज्ञान हुआ उसने उसे कचरे में डाल दिया। यह आचरण हो गया। दर्शन, ज्ञान और फिर आचरण में परिवर्तन हुआ। ये तीनो घटनाऐं बिजली जैसे चमक जाए वैसे घट जाती हैं। आज हीरे फिजूल हो गये, फिर इनको त्यागना नही पड़ा। लोग कहते है फलां व्यक्ति ने त्याग किया, महावीर ने त्याग किया। ऐसा नहीं हैं। संसार की व्यर्थता का बोध होने से, ज्ञान होत ही स्वतः ही सब छूट जाता है। कचरे का कोई त्याग करता है? हम कचरे को कचरेघर में डाल देते हैं। महावीर को दिख गया कि कचरा है संसार, कचरा छूट गया। त्याग करना नहीं पड़ता, हो जाता है। बुद्ध को जैसे ही दिखा पत्नी, बेटा धन दौलत सब में सार नहीं है, स्वतः ही छोड़कर चले गये इसमें कोई त्याग नहीं हुआ। दुनिया में किसी ज्ञानी ने कभी कोई त्याग नहीं किया। सिर्फ अज्ञानी त्याग करते हैं और कष्ट भोगते है। उनका रस भी वहाँ बंधा रहता है, भीतर एक कश्मकश, एक संघर्ष जारी रहता है। ज्ञानी जानता है और पाता है कि स्वतः ही व्यर्थ छूट जाता है। बस, देखता है और छूट जाता है। सम्यक दर्शन हुआ, कि सम्यक आचरण आने-आप हो जाता है।

यह जो मैंने थोड़ी सी बातें कहीं, इनमें से दो-तीन प्रमुख बातों को दोहरा देता हूं ताकि वे आपके मन में बैठ जाएं। मैंने कहा कि आत्मा को पाने के लिए कोई साधन और सामग्री नहीं चाहिए है। आत्मा को पाने के लिए केवल मन को दर्पण बनाने की जरूरत है। फिर मैंने कहा कि मन को दर्पण बनाने के लिए, उस पर जो धूल बैठी है उसे पहचानना जरूरी है। वह धूल विचार की धूल है। फिर मैंने कहा कि ये जो विचार की धूल है, इसे

कोई दमन से, दबा के, झटक के हटा के दूर नहीं कर सकता है। इसे दूर करने के लिए सम्यक जागृति, सम्यक बोध पैदा करने की जरूरत है। यह सम्यक बोध मनुष्य में शून्य पैदा करता है। इसी शून्य पर का पूरा का पूरा संत-साधना का साहित्य आधारित है। इसी शून्य पर जगत के समस्त योग का महत्वपूर्ण साहित्य आधारित है। जो भी महत्वपूर्ण है आध्यात्मिक जीवन में, वह शून्य पर आधारित है। इस शून्य को पैदा कर लेने से दर्शन उपलब्ध होता है। दर्शन उपलब्ध होने से ज्ञान उपलब्ध होता है। ज्ञान उपलब्ध होने से आचरण उपलब्ध होता है। और इन तीनों रत्नों की उपलब्धि जीवन की क्रांति है। धर्म, इस क्रांति को लाने का विज्ञान है। ईश्वर करे, इस विज्ञान ने जैसे दूसरे लोगों के जीवन की चिंगारी को चमकाया और प्रकाशित कर दिया वैसे ही हम सबका जीवन भी उससे प्रकाशित हो। और ये सदी जो कि अंधेरे में गिरती चली जा रही है, धर्म के इस मूल विज्ञान को उपलब्ध कर ले और मनुष्य फिर से एक दिव्य आलोक से भर जाए, ऐसी कामना करता हूं।

बहुत-बहुत धन्यवाद। मेरी बातों को इतनी शांति से सुना और इतने प्रेम से अपने मन में लिया। उसके लिए अनुगृहीत हूं।